[निजी प्रसार के लिए]

अंक २६ नई दिल्ली, अप्रैल २०१२

लोक पुलिस

मासिक पत्रिका

सी.एच.आर.आई. जनतांत्रिक पुलिस के लिए

^turk tkxr gk rk vijk/k u nt djuk lEHko ugh*

श्री जेकब पुन्नूस

केरल के डी.जी.पी. श्री जेकब पुन्नूस से पुलिसिंग पुलिस शिकायत प्राधिकरण और इससे सम्बन्धित विभिन्न मुद्दों पर ज़ीनत मलिक से साक्षात्कार का प्रथम भाग।

केरल पुलिस कानून व्यवस्था बनाए रखने और अपने पूरे कार्यनिष्पादन के तरीके के आधार पर देश की सबसे सफल पुलिस बल है। साथ ही केरल की जनता सबसे अधिक साक्षर भी है, क्या इन दोनों तथ्यों का पारस्परिक पूरक सम्बन्ध है जो राज्य पुलिस को बाकी राज्यों से अलग स्वरूप प्रदान करता है? क्या साक्षर जनता पुलिस के दायित्वों का निर्वाह करने पर अधिक दबाव बना पाती है?

केरल दो और तीन बिन्दूओं पर भिन्न है। ऐसा नहीं है कि लोग आमतौर पर बेहद शिक्षित हैं। जो शिक्षित जनसंख्या है उसका ६० प्रतिशत केवल सीनियर सेकेन्ड्री पास हैं या फिर छात्र स्कूलों में हैं अभी, दूसरा कारक है कि यहाँ लोगों में अपने प्रजातांत्रिक अधिकारों के बारे में बेहद जागरूकता है तीसरा कारक है कि हमारे यहाँ आय वितरण बहुत अच्छा है हालांकि प्रति व्यक्ति आय का अनुपात उतना अच्छा नहीं है। साधारण शिक्षा के साथ अधिकारों के प्रति सजगता और बेहद अच्छे आय वितरण के कारण केरल की जनता बाकी जनता से कुछ अलग है। इसकी वजह से पुलिस के काम में थोड़ी कठिनाई भी आती है और इसके फ़ायदे भी मिलते हैं। कठिनाई यह है कि किसी व्यक्ति के कानूनी अधिकारों का हनन होने पर उसके अनुसार कार्यवाही करनी ही होगी। अगर वह रिपोर्ट दर्ज कराने आता है तो रिपोर्ट लिखना ही होगा इसके अलावा कोई विकल्प नहीं है। इसलिए, अपराधों की संख्या अधिक दिखाई पड़ती है। इंडिया टुडे आदि के सर्वे के अनुसार केरल, कानून व्यवस्था के पालन में सर्वश्रेष्ठ है लेकिन आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि केरल में अपराध दर सबसे अधिक है। यहाँ हर १ लाख आबादी पर ४२० केस दर्ज होते हैं जबकि राष्ट्रीय आंकड़ा १८७ का है और उत्तर प्रदेश में यह आंकड़ा केवल १०० का है। अब यह आंकड़ा पहले आंकड़े के परस्पर विरोधी है लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि केरल में सबसे अधिक अपराधी बसते हैं बल्कि यह इस बात का सूचक है कि यहाँ पर लोग अपने कानूनी अधिकारों के प्रति इतने सजग हैं कि किसी छोटे अपराध के लिए भी कानून की मदद अवश्य लेते हैं। इसका एक और उदाहरण देना चाहूंगा कि भारत के अपराध आंकड़ों के अनुसार १९९२ में केरल में ७० हज़ार केस दर्ज हुए और इसमें से ५५६ मर्डर केस थे जबकि २०११ में करीब १ लाख ७१ हजार एफ.आई.आर. भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत दर्ज हुए और इसमें से केवल ३६० मर्डर केस थे। अब जबकि २० वर्षों में राज्य की आबादी ३० प्रतिशत तक बढ़ चुकी है फिर भी अपराध की कुल संख्या में कमी आई है। अपराध रजिस्ट्रेशन संख्या अधिक होने का अर्थ यह नहीं है कि अपराध की घटना में बढ़ोतरी हुई है बल्कि इसका अर्थ है कि पुलिस ने अधिक केसों पर अपनी पकड़ बनाई है।

यही स्वरूप सभी आधुनिक व पश्चिमी देशों में भी अपराध के आंकड़ों का है। उदाहरण के तौर पर ब्रिटेन में प्रत्येक १ लाख आबादी पर ६००० एफ.आई.आर. दर्ज होते हैं जबकि फिनलैंड जो कि ट्रांसप्रैरेंसी इंटरनेशनल के अनुसार सबसे अधिक ईमादनार देश माना जाता है वहाँ १४००० एफ.आई.आर. दर्ज होते हैं प्रत्येक १ लाख आबादी पर। अपराध न दर्ज करके कृत्रिम आंकड़े दिखाना वहाँ सम्भव है जहां जनता जागृत नहीं है। इसलिए पुलिस की क्षमता इस बात से आंकी जानी चाहिए कि वह समाज में होने वाले अपराधों पर किस हद तक पकड़ बनाती है। हालांकि, केरल में इससे कार्य–भार बहुत अधिक बढ़ जाता है। लेकिन इसके फायदे भी हैं, यहाँ लोगों को बेहतर सुरक्षा प्राप्त करने के लिए प्रेरित करना आसान होता है। लोगों के लिए बेहतर तरीके से काम कर पाने में यहाँ कि जनता द्वारा हर समय पुलिस की मदद के लिए तैयार होना भी एक प्रमुख कारक है।

हमारे यहाँ काम की अधिकता के बावजूद २०१० में समूचे देश में पुलिस व जनता का अनुपात १ पुलिसकर्मी पर ५६० व्यक्तियों का है, जबकि केरल में १ पुलिसकर्मी पर ७२८ व्यक्ति हैं। यह भी केरल की पुलिसिंग की विशिष्टता है।

जैसा कि आपने अभी बताया कि केरल निःसंदेह देश की एक बेहतरीन पुलिस बल है। परंतु क्या कारण है कि पिछले साल पुलिस के विरुद्ध अदालत में २१००० केस दर्ज हुए थे?

यह इस कारण से है क्योंकि लोग उचित उपचार चाहते हैं और उसे निश्चित रूप से हासिल करने के लिए उच्चतम उपलब्ध प्राधिकरण के पास जाते हैं। यह इसलिए नहीं है कि उन्हें पुलिस से शिकायत है, उनकी अर्जी में पुलिस पर आरोप नहीं होता है। उदाहरण के तौर पर केरल में यह बहुत साधारण बात है कि अगर पड़ोसी से झगड़ा है तो दोनों पक्ष अदालत के पास जाएंगे और अपने अधिकारों की मांग करेंगे।

क्या इससे यह नहीं प्रतीत होता कि जनता पुलिस पर भरोसा नहीं करती और इसलिए ही सीधे उच्च न्यायालय का रास्ता चुनती है?

यह इसलिए है कि जनता अपने अधिकारों के प्रति बेहद जागरूक है और वह अपने सिविल दावों को सुनिश्चित करने के लिए अदालत जाती है। छोटे मामलों में भी लोग रिट दायर करते हैं। इसका एक महत्वपूर्ण कारण है आय के एक समान वितरण में बढ़ोतरी और इन आंकड़ों की दूसरे विकसित देशों के आंकड़ों से तुलना की जानी चाहिए। ऐसा सभी विकसित देशों में देखा जाता है कि लोग अपने अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए निवेश करते हैं। हमारे यहाँ मेरे कई कांस्टेबल हैं जिन्होंने सर्विस मामलों के लिए रिट दायर कर रखा है। यह इसलिए नहीं है कि पुलिस काम नहीं कर रही है बल्कि यह इसलिए है कि पुलिस काम तो कर रही है मगर लोग उस कार्यवाही के लिए आश्वासन चाहते हैं, यह एक जटिल मसला है।

लेकिन आम जनता अदालत जाना पुलिस शिकायत प्राधिकरण में जाने से बेहतर समझती है क्योंकि आपके अनुसार अब तक एक साल में राज्य पुलिस शिकायत प्राधिकरण के पास केवल ४ केस आए हैं, ऐसा क्यों?

इसका भी कारण है, केरल में दो पुलिस शिकायत प्राधिकरण हैं–एक जिला पुलिस शिकायत प्राधिकरण और एक राज्य पुलिस शिकायत प्राधिकरण। राज्य पु.शि. प्रा. द्वारा एस.पी. और उससे बड़े अधिकरियों के विरुद्ध कार्यवाही की जा सकती है। इस स्तर पर अधिकारियों की कुल संख्या केवल २०० है इसलिए उनके विरुद्ध केसों की संख्या प्राकृतिक रूप से कम होगी। इसके अलावा आम पुलिस कर्मियों के विरुद्ध संगीन केसों की शिकायत भी यहाँ की जा सकती है जैसे : बलात्कार या हिरासत में प्रताड़ना आदि ।

बूझो और जीतो–४

प्रिय पाठकों,

लोक पुलिस पत्रिका द्वारा आपके लिए इस रोचक प्रतिस्पर्धा की शुरुआत की गई थी। जिसके अंतर्गत आपसे केवल ५ सवाल पूछे जाते हैं, जो आपके काम से संबंधित होते हैं। पहले ५ सही जवाब भेजने वालों को ५०० रुपये पुरस्कार के रूप में डिमाण्ड ड्राफ्ट या चेक द्वारा भेजा जाएगा और विजेताओं के नाम पत्रिका में प्रकाशित किये जाएंगे।

आपके सवाल निम्नलिखित हैं:–

१. जांच के दौरान थर्ड डिग्री का उपयोग किन परिस्थितियों में किया जा सकता है?

२. क्या किसी महिला को रात के ९ बजे गिरफ़्तार किया जा सकता है? यदि 'हां' तो किसके द्वारा और किस प्रावधान के अंतर्गत?

३. अग्रिम जमानत किस प्रावधान के अंतर्गत मांगी जा सकती है? क्या पुलिस अग्रिम जमानत दे सकती है?

४. गिरफ़्तारी के कितने समय के भीतर उस व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के सामने प्रस्तुत किया जाना चाहिए?

५. किसी असज्ञेय अपराध की सूचना मिलने पर क्या एफ.आई.आर. दर्ज की जा सकती है? यदि 'हां' तो किस प्रावधान के अंतर्गत यदि 'नहीं' तो क्या विकल्प है?

बूझो और जीतो–१ का परिणाम

जनवरी अर्थात् प्रथम अंक का परिणाम इस अंक में प्रकाशित किया जा रहा है। इसमें पूछे गए प्रश्नों के उत्तर और विजेताओं के नाम इस प्रकार हैं।

उपरोक्त के सही उत्तर निम्नलिखित हैं:

१. दण्ड प्रक्रिया संहिता (द.प्र.सं.) की धारा १५४ (२) के अंतर्गत शिकायतकर्त्ता को शिकायत की एक कॉपी मुफ़्त पाने का अधिकार है।

२. आमतौर पर आरोपी को भी शिकायत की कॉपी प्राप्त करने के लिए कोई पैसे नहीं देने पड़ते हैं।

३. द.प्र.सं की धारा ४१ के अंतर्गत पुलिस को बिना वारंट गिरफ़्तारी करने का अधिकार है।

४. द.प्र.सं की धारा १६० (१) के प्रोवाईज़ो के अनुसार पुलिस महिलाओं को पूछताछ के लिए थाने नहीं बुला सकती है।

५. द.प्र.सं की धारा ४३६ (१) के अंतर्गत पुलिस आरोपी को सभी ज़मानती केसों में जमानत दे सकती है।

सही जवाब भेजने वाले पहले पांच सहभागी इस प्रतियोगिता के विजेता हैं। इनके नाम निम्नलिखित हैं:–

१. श्री जगदीश पुनियाँ, उप अधिक्षक, राजस्थान पुलिस।

२. श्री कैलाश चन्द, इंस्पेक्टर, वितीय अपराध शाखा, गुड़गाव, हरियाणा पुलिस।

३. श्री शैलेन्द्र प्रसाद, रीडर, मालवीय नगर थाना, दिल्ली पुलिस।

४. श्रीमति कौशल्या देवी, राजस्थान पुलिस।

५. श्री अमित कुमार, कांस्टेबल, मालवीय नगर थाना, दिल्ली पुलिस।

नोट: सभी विजेताओं को मई के अंतिम सप्ताह तक चेक या डिमाण्ड ड्राफ्ट द्वारा पुरस्कार की राशी भेज दी जाएगी। मई २०१२ अंक में बूझो और जीतो–२ (फरवरी) के परिणाम प्रकाशित किये जाएंगे।

अपना जवाब हमे लिखें या ईमेल करें–

ज़ीनत मलिक
प्रधान संपादक, *लोक पुलिस*
कॉमनवेल्थ ह्यूमन राइट्स इनिशिएटिव
बी–१७७, दूसरा तल, सर्वोदय एनक्लेव, नई दिल्ली ११००१७, भारत
फोन : +९१-०११-४३१८०२००, ४३१८०२२५-२६६
फैक्स : +९१-०११-२६५८६४६८८
ई–मेल: *zeenatmalick@gmail.com*
वेबसाईट: *http://www.humanrightsinitiative.org*

अपराध स्थल जांच–नमूना एकत्रित करना

हत्या, बलात्कार, आगजनी आदि जैसे संगीन अपराधों में जाँच अधिकारी को सभी विशेष स्रोतों से भौतिक सबूत एकत्रित करने होते हैं। इस तरह के नमूनों को इकट्ठा करने के लिए विशेषज्ञों की तरह सम्भालने की आवश्यकता होती है।

जाँच अधिकारी को अगर आवश्यकता महसूस हो तो वैज्ञानिकों द्वारा साईट इंस्पेक्शन, सबूतों की तलाश और सबूतों को एकत्रित किये जाने की मांग करनी चाहिए। जब ऐसे विशेषज्ञों की सेवा आसानी से उपलब्ध न हो तब, अधिकारियों को उन्हें फंसाने वाले पदार्थों को बेहद ध्यान से सावधानी पूर्वक इकट्ठा करना चाहिए। पुलिस नियमावली में विभिन्न नमूनों को कैसे एकत्रित किया जाना चाहिए, कैसे सम्भालकर रखना चाहिए और कैसे विशलेषण के लिए लेबोरेटरी में भेजा जाना है उसकी विस्तृत जानकारी दी गई है। उदाहरण के तौर पर आंध्र प्रदेश के पुलिस मैन्यूअल में अलग धाराएं हैं जिसमें रक्त एकत्रित करने, दूसरे शारीरिक द्रव, मिट्टी, शीशा, पेन्ट, नार्कोटिक्स, टाक्सिन आदि को एकत्र करने के बारे में बताया गया है। इन नियमों में इनके नमूनों को कैसे लिया जाए, इन नमूनों की कौन सी जाँच कराई जाए और अधिकारियों द्वारा क्या सावधानियां बरती जाएं, के बारे में बताया गया है।

फिर भी, इतने विस्तृत दिशानिर्देशों के बावजूद यह एक आम शिकायत है कि पुलिस, घटना स्थल पर पाई गई वस्तुओं को परीक्षण के लिए लैब में नहीं भेजती है बल्कि उन्हें मालखाने में रखा जाता है। परिणाम स्वरूप मार्मिक सबूत नष्ट हो जाते हैं या अधिकतर गुम हो जाते हैं। कई बार यह विलम्ब महीना–दो महीना, छः महीना या उससे अधिक भी हो जाता है।

हालांकि, फौरेंसिक साईंस इस सिद्धांत पर आधारित है कि वर्षों के निकास के बावजूद नमूनों का परीक्षण किया जा सकता है और परिणाम ठीक निकलेंगे लेकिन, डॉक्टरों का यह भी दावा है कि अगर नमूनों का शीघ्र परीक्षण किया जाए तो परिणाम कहीं बेहतर होंगे। उदाहरण के तौर पर सूखे रक्त के नमूने से रक्त के ग्रुप का पता लगाया जा सकता है लेकिन इससे आर.एच. +टिव और –टिव अवस्था का पता नहीं लगाया जा सकता है। *उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अरुण गुप्ता* के केस में २००३ में उच्चतम न्यायालय ने कहा 'ऐसी वस्तुओं की प्राप्ति से अभियोजन के केस पर एक विचारपूर्ण संदेह उत्पन्न होता है और अदालत के लिए इन तथ्यों पर विश्वास करना बेहद कठिन होता है।' समय में विलम्ब केस के लिए घातक सिद्ध हो सकता है।

विशेषज्ञों की मदद

आमतौर पर विशेषज्ञ द्वारा सबूत की आवश्यकता जाँच के दौरान या अदालत में गवाही के लिए या प्रदर्शन के लिए होती है।

यह आवश्यक नहीं है कि विशेषज्ञ के मत की आवश्यकता हर समय हो। लेकिन अगर इसकी ज़रूरत महसूस हो तो अवश्य ही उनकी मदद ली जानी चाहिए। पंजाब पुलिस नियमावली का २५.१४ नियम जाँच अधिकारियों के लिए साफ निर्देश देता है कि उन्हें जाँच में तकनीकी सहायता के लिए विशेषज्ञों की मदद लेनी चाहिए। इन विशेषज्ञ सबूतों में बैलिस्टिक विशेषज्ञ, फौरेंसिक विशेषज्ञ, रसायन जाँचकर्ता, फिंगर प्रिंट विशेषज्ञ, तथा हैन्ड राईटिंग एक्सपर्ट भी शामिल हो सकते हैं।

विशेषज्ञों का मत आमतौर पर किसी डायरेक्ट सबूत की सहायता करने के लिए ली जाती है। किसी विशेषज्ञ का मुख्य काम है अपनी प्राप्ति की विस्तृत और निर्णायक रिपोर्ट देना। अपनी रिपोर्ट में उसे अपने निर्णय पर आने का साफ़ कारण देना होगा ताकि अदालत इस सबूत के आधार पर तथा दूसरे समर्थक सबूतों के आधार पर अपने निर्णय तक पहुंच सके।

– नवाज़ कोतवाल

कानून के विरूद्ध बच्चों कि देखरेख और सुरक्षा - नए दिशा निर्देश

'देखरेख और सुरक्षा' दो ऐसे शब्द हैं जो बाल न्याय (बच्चों की देखरेख और सुरक्षा) अधिनियम २००६ के अंतर्गत उन दोनों श्रेणी के बच्चों (जिन्हें केवल 'देखरेख और सुरक्षा की आवश्यकता रखने वाले बच्चे' और वे बच्चे जो 'कानून के विरुद्ध' हों) के लिए विशिष्ट व्यव्हार और सुरक्षा प्रदान कराने की बात करता है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद १५, ३९, ४५ एंव ४७ के अंतर्गत भी राज्य के ऊपर यह प्राथमिक दायित्व है कि बच्चों की सभी आवश्यकताएं पूरी की जाएं और उनके सभी बुनियादी मानव अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित की जाए। अंतर्राष्ट्रीय मानक जैसे कि बाल अधिकारों की घोषणा में इस बात पर बल दिया गया है कि बच्चों की हर प्रकार की लापरवाही, क्रूरता तथा शोषण से सुरक्षा की जाएगी। भारत ने भी १९८९ और १९९२ में बाल अधिकारों की प्रसंविदा की अभिपुष्टि की है जो प्रत्येक बच्चे के अधिकारों, सम्मान और महत्त्व की गारंटी देता है। बाल न्याय के लिए इतने प्रगतिशील राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मानकों के होने के बावजूद इन कानूनों का व्यावहारिक बोध बहुत दूर मालूम पड़ता है।

इसके वास्तविक रूप में प्राप्ति की ओर हाल ही में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा एक कदम उठाया गया जब अदालत ने सूचना के अधिकार पर आधारित एक जनहित याचिका की सुनवाई करने के दौरान बाल अपराधियों से व्यव्हार और उनकी सुरक्षा से सम्बन्धित दिशा–निर्देशों की एक श्रृंखला जारी की। दरअसल, इस प्रकार प्राप्त सूचना से यह ज्ञात हुआ था कि पिछले एक वर्ष में ११४ नौजवान आरोपियों को बाल न्याय बोर्ड द्वारा किशोर पाए जाने पर निरीक्षण गृह में ट्रांसफर किया गया था। साथ ही, जब राष्ट्रीय बाल अधिकारों की सुरक्षा आयोग और दिल्ली विधिक सेवाएं प्राधिकरण के सदस्यों की एक टीम ने तिहाड़ के जेल नम्बर ६ व ७ का निरीक्षण किया तब २७८ नौजवान आरोपियों में से १०० से भी अधिक आरोपी किशोर पाए गये। इससे साफ़ पता लगता है कि इसके बारे में कोई उचित जांच नहीं की जाती है– न तो पुलिस के द्वारा जब वह उन्हें गिरफ़्तार करती है, न ही मजिस्ट्रेट के द्वारा जब वे रिमांड मंजूर करते हैं और न ही जेल अधिकारियों के द्वारा जब वे इन्हें जेल में भर्ती करते हैं।

अदालत ने माना कि एक बार जब यह स्थापित हो जाए कि ऐसे कैदी किशोर हैं, उन्हें एक दिन के लिए भी जेल भेजना उनके मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन है। इसने मजिस्ट्रेट और पुलिस दोनों को किशोरों के पहचान के लिए समान रूप से ज़िम्मेदार बनाया है। हालांकि, अदालत ऐसे केसों में सभी अधिकारियों द्वारा पालन किये जाने के लिए व्यापक दिशा निर्देश और नीतियों का निर्धारण करना चाहती थी फिर भी, इसमें निम्नलिखित निर्देशों के तुरंत पालन के आदेश दिये हैं :–

१. जेल अधीक्षक का कर्त्तव्य :– ऐसे कैदी जिनकी शुरुआती जाँच के बाद उनके किशोर होने का संदेह हो या जिनकी उम्र १८ वर्ष दिखाई गई हो लेकिन वे उससे कम उम्र के लगते हों, जेल अधीक्षक को उन्हें अवश्य रूप से अलग, और दूसरे कैदियों से बचाकर रखना चाहिए।

२. बाल न्याय बोर्ड (जे.जे.बी.) के कर्त्तव्य :– निर्णायक रूप से उनकी आयु निश्चित करने के लिए उन्हें बाल न्याय बोर्ड के समक्ष समूह में प्रस्तुत किया जाना चाहिए। और जो लोग अंतिम रूप से जे.जे.बी. द्वारा किशोर पाये गये हों उन्हें जेल से निरीक्षण गृह में शिफ्ट कर दिया जाना चाहिए।

३. मजिस्ट्रेट के कर्त्तव्य :– अदालत ने *गोपीनाथ घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य १९८४ ए.आई.आर.एस.सी. २३७* पर निर्भर करते हुए कहा कि जब कभी भी किसी नौजवान अपराधी को मजिस्ट्रेट के सामने प्रस्तुत किया जाता है और उस व्यक्ति के रूप–रंग से १८ साल से कम के होने का आभास होता है और उन सभी केसों में जहाँ व्यक्ति की उम्र १८-२१ वर्ष बताई गई हो, मजिस्ट्रेट का कर्त्तव्य होगा कि वह इसकी आयु सुनिश्चित करने का आदेश दें।

४. पुलिस/जाँच अधिकारी का कर्त्तव्य :–

- जाँच अधिकारी को गिरफ़्तारी पर्चा बनाने के समय आरोपी की आयु का उल्लेख अवश्य करना चाहिए।
- पुलिस अधिकारी का कर्त्तव्य है कि वह उसकी आयु गिरफ़्तार व्यक्ति से पूछकर या अगर उसके पास कोई पहचान पत्र है तो उसे देखकर सुनिश्चित करे। दसरे केस में, जहाँ उसके पास कोई पहचान पत्र नहीं है और जाँच अधिकारी को ऐसा लगता है कि वह एक किशोर है तब, उसे अदालत की जगह बाल न्याय बोर्ड के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए।
- पुलिस अधिकारियों को जैसे कि डी.के. बासू केस में विकसित 'गिरफ़्तारी पर्चा' के अनुसार ही 'आयु पर्चा' विकसित करना चाहिए।

जाँच करते समय :–

- जाँच अधिकारी को उस व्यक्ति से पूछना चाहिए कि उसने कभी औपचारिक शिक्षा प्राप्त की है और यदि वह सकारात्मक जवाब दे तो उसके स्कूल के रिकॉर्ड को अति शीघ्र सत्यापित करना चाहिए।
- अगर उसके जन्म को एम.सी.डी. या ग्राम प्रधान के पास, जैसा कि कानून में बताया गया है पंजीकृत कराया गया है कि नहीं इस बारे में प्राथमिक जाँच करनी चाहिए और सम्बद्ध दस्तावेज/जवाब को रिकॉर्ड करना चाहिए।
- जहाँ ऐसा कोई दस्तावेज तुरंत प्राप्त नहीं किया जा सके और जाँच अधिकारी के पास पर्याप्त आधार हो यह मानने के लिए कि ऐसा दस्तावेज मौजूद है, तब जाँच अधिकारी को उस व्यक्ति को जे.जे.बी. के पास प्रस्तुत करके इन दस्तावेजों को उपलब्ध कराने के लिए समय मांगना चाहिए।
- उपरोक्त के अलावा पहले आपराधिक मामले में शामिल होने के रिकॉर्ड के बारे में अवश्य इंक्वायरी करना चाहिए ताकि अतीत में किशोरावस्था के किसी घोषणा की जानकारी मिल सके। इसके लिए पुलिस को किशोरावस्था घोषणा से सम्बन्धित डाटा भी संभालकर रखना चाहिए।
- ऐसे हर केस में जहाँ एक बच्चा अपनी उम्र २१ वर्ष से कम होने का दावा करता है इस बात का ध्यान किए बगैर कि उसे किशोर पाया गया या व्यस्क, इसमें की गई इंक्वायरी को लिखित रूप में दर्ज किया जाना चाहिए और इसे जाँच रिपोर्ट का भाग बनाना चाहिए।
- विशिष्ट बाल पुलिस यूनिट द्वारा एडवाइजरी / सर्कुलर / स्टैंडिंग ऑर्डर जारी करना चाहिए जिसमें जाँच अधिकारी द्वारा किशोरों को जे.जे.बी. और व्यस्कों को अदालत में ट्रांसफर करने की सामंजस्यता स्थापित करने के लिए उपयोग की जाने वाली प्रक्रिया भी शामिल हो।
- यह आपराधिक न्याय व्यवस्था के सभी अभिनेताओं की ज़िम्मेदारी है कि वे किशोर और 'आपराधिक दूषण' के खतरे के बीच रुकावट का काम करें।
- ऐसे हर केस में जब कोई जन अधिकारी किसी व्यक्ति को व्यस्क के रूप में गिरफ्तार करता है और उसे किशोर पाया जाता है तब, सम्बन्धित डी.सी.पी. को इस बात की इंक्वायरी करके इस बात से संतुष्ट होना चाहिए कि कहीं जान बूझकर कोई चूक तो नहीं की गई थी।

– सुगन्धा शंकर

क्या आप जानते हैं ?

इस श्रृंखला में इस बार हम केरल पुलिस द्वारा फरवरी में जारी किये गए एक सर्कुलर को प्रस्तुत कर रहे हैं जिसमें कानून द्वारा पुलिसकर्मियों और अधिकारियों के वाक् एंव अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकारों पर अंकुश लगाया गया है और इसी का हवाला देकर तथा पहले से बतलाए गए आदेशों से दो कदम आगे बढ़कर केरल पुलिस ने पुलिस अधिकारियों को किसी भी प्रकार से अपने काम तथा अन्य किसी भी मुद्दे पर अपना मत देने से दूर रहने का आदेश दिया है। इस सर्कुलर को यहाँ ज्यों का त्यों प्रस्तुत किया जा रहा है।

इसके अनुसार-

भारत के संविधान का अनुच्छेद ३३ पुलिस बल के सदस्यों के वाक् एंव अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकारों पर रोक लगाता है। पुलिस बल (अधिकारों पर प्रतिबन्ध) अधिनियम १९६६, पुलिस बल के सदस्यों पर किसी संगठन बनाने पर रोक तथा वाक् एंव अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकारों का आनंद उठाने पर रोक लगाता है। इस कानून की धारा ३ को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है–

''संघ बनाने तथा वाक् स्वतंत्रता के अधिकारों आदि पर रोक से सम्बन्धित–

(१) कोई भी पुलिस अधिकारी, केन्द्र सरकार या निर्धारित अधिकरियों की स्पष्ट स्वीकृति के बगैर –

(क) किसी भी प्रकार से मजदूर संघ, व्यापार संघ, राजनैतिक संघ का सदस्य नहीं होगा या किसी भी वर्ग के मजदूर संघ, व्यापार संघ और राजनैतिक संघ से किसी भी रूप में सम्बन्धित नहीं होगा, या

(ख) किसी भी दूसरे समाज, संस्थान, संघ या संगठन का सदस्य नहीं होगा या सम्बन्धित नहीं होगा जिसे उस बल के भाग के रूप में मान्यता न प्राप्त हो वह जिसका सदस्य है या जो सम्पूर्ण रूप से सामाजिक, धार्मिक या मनोरंजनात्मक प्रकृति का न हो,या

(ग) प्रेस से सम्पर्क नहीं करेगा या कोई भी किताब, पत्र और दूसरे दस्तावेजों का प्रकाशन नहीं करेगा और न ही करवायेगा, जबतक कि इस प्रकार का सम्पर्क या प्रकाशन उसके दायित्वों के वास्तविक निर्वाह के लिए न हो या वह पूरी तरह साहित्यिक, कलात्मक या वैज्ञानिक प्रकृति का न हो या जो निर्धारित प्रकृति का न हो।

(घ) पुलिस बल का कोई भी सदस्य, किन्हीं व्यक्तियों के निकाय द्वारा राजनैतिक उद्देश्यों या किसी भी निर्धारित उद्देश्यों के लिए आयोजित किसी मीटिंग या प्रदर्शन में भाग नहीं लेगा, न ही उसे सम्बोधित करेगा ''

२. ऊपर उल्लेखित प्रतिबन्धों को यह सुनिश्चित करने के लिए लगाया गया है कि पुलिस बल पूरी तरह राजनैतिक अलहदगी रखे। जनता को यह महसूस होना चाहिए कि पुलिस, राजनैतिक पार्टियों की गतिविधियों के प्रति राजनैतिक रूप से अपक्षपाती है। यह कानून–व्यवस्था बनाए रखने तथा कानून का राज कायम रखने के लिए आवश्यक है। इसलिए, पुलिसकर्मियों का आचरण, व्यक्तिगत रूप से और सामूहिक रूप से संवैधानिक, कानूनी, व्यावासायिक और व्यावहारिक आवश्यकताओं को कायम रखने की राजनैतिक अलहदगी के अनुरूप हो। उपरोक्त के अनुसार, उल्लेखित के अलावा प्रकाशन और प्रख्याति से सम्बन्धित आगे निम्नलिखित निर्देश जारी किये जा रहे हैं चाहे वह पुलिस कर्मियों द्वारा व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से या किसी मान्यता प्राप्त संघ द्वारा किया जाए:–

(i) पुलिसकर्मियों द्वारा पुलिस ड्यूटी या पुलिस विभाग से सम्बन्धित कोई भी बात, बगैर यूनिट हेड की आज्ञा के और ए.डी.जी.पी. (इंटेलिजेंस) तथा राज्य पुलिस प्रमुख से पूर्व आज्ञा के नहीं कही जाएगी और न ही किसी स्थान, वेबसाईट, कंप्यूटर रिसोर्स, बैनर, पोस्टर, विज्ञापन बोर्ड, नोटिस बोर्ड आदि द्वारा इससे सम्बन्धित कोई विचार व्यक्त किया जाएगा।

(ii) किसी व्यक्ति, समूह या विचार पर निंदा, समीक्षा, मूल्यांकन या तारीफ़ की आज्ञा यूनिट हेड द्वारा नहीं दी जाएगी, अगर उस बात को जन प्रदर्शन के लिए रखा जाए और ऐसी समीक्षा, मूल्यांकन और तारीफ को पुलिस बल द्वारा कायम राजनैतिक अपक्षपात के विरुद्ध या राजनैतिक रूप से प्रेरित या व्यवासायिक अपक्षपात के विरुद्ध या जो पुलिस के जाँच, कानूनी प्रक्रिया या झगड़े में बल की व्यवासायिक अपक्षपाती छवि को धूमिल करने जैसा लगे।

(iii) जहाँ किसी सरकारी अधिकारी या चयनित जन प्रतिनिधि या आदरणीय उपकारी द्वारा कोई बड़ी उपलब्धि, योगदान या स्वीकृत को स्वीकार करना या औपचारिक रूप से मान्यता देने की आवश्यकता होगी तब, यूनिट हेड या राज्य पुलिस प्रमुख इसके औपचारिक प्रकाशन या प्रदर्शन का निर्णय हर केस से सम्बन्धित अलग अलग रूप में ले सकते हैं।

(iv) उपरोक्त उप पारा (१) में उल्लेखित ए.डी.जी.पी. इंटेलिजेंस को पूर्व सूचना की आवश्यकता, उन सभी स्वीकृत पुलिस संघ की मीटिंग के लिए तथा ऐसे पोस्टरों, बैनरों आदि के प्रकाशन के लिए नहीं होगी जो यूनिट हैड द्वारा स्वीकृत प्रोग्राम के अंतर्गत किया जा रहा है। हालांकि, इनकी विष्य–वस्तु पुलिस द्वारा अपनाये गये व्यवासायिक अपक्षपाती छवि के विरुद्ध नहीं होनी चाहिए।

उपरोक्त अतिरिक्त निर्देशों के अनुसार केरल पुलिस प्रमुख ने समूचे पुलिस बल के मुंह से निकलने वाले हर उस शब्द पर तब तक अंकुश लगा दिया है जब तक कि वे उनकी या कहने वाले के यूनिट हेड की मंजूरी न ले लें। एक प्रगतिशील पुलिस बल का नेतृत्व कर रहे पुलिस प्रमुख द्वारा इस प्रकार का निर्देश देना बेहद असमंजस पैदा करने वाला है। इसके अनुसार किसी मीटिंग, कॉनफ्रेंस आदि के दौरान कोई भी पुलिसकर्मी उसमें उठाये गये मुद्दे पर अपना मत नहीं दे पाएंगे और न ही पुलिस अधिकारी किसी पत्र–पत्रिका या दृश्यमीडिया द्वारा उससे काम से सम्बन्धित पूछे गए किसी भी सवाल का जवाब दे पाएंगे क्योंकि तब यह तर्क रखा जा सकता है कि इससे भी पुलिस के रुझान पर सवाल उठ सकते हैं।

यह सर्कुलर उपरोक्त कानूनों में उल्लेखित सीमाओं से आगे बढ़कर समूचे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को समाप्त करती हुई मालूम पड़ती है। जबकि, इसे सीमित करना पुलिसिंग के दायित्व का भाग है, इसमें कोई संदेह नहीं है। लेकिन, यह सर्कुलर इस पर सिरे से रोक लगाता है।

हम आशा करते हैं कि पुलिस प्रमुख द्वारा इसमें आवश्यक बदलाव अवश्य ही किया जाएगा क्योंकि हर कथन के लिए इंटेलिजेंस को सूचित करना या अनुमति लेना अनावश्यक है। साथ ही, इससे विभाग में परस्पर व्यावसायिक विश्वास पर सवालिया निशान उठता है।

– जीनत मलिक

पृष्ठ १ का शेष

ऐसे अपराधों के मामलों में भी मैं स्वंय अपने आप ही कार्यवाही करता हूं तो प्राधिकरण के पास जाना आवश्यक नहीं होता।
शायद मैं ही एक ऐसा डी.जी.पी. हूं जो आपराधिक गतिविधियों में शामिल होने वाले पुलिसकर्मियों की सूचना प्राप्त करने के लिए एक अलग रजिस्टर रखता हो।

अभी मेरे ३०० पुलिसकर्मी सस्पेंड हैं इन्हीं कारणों से। कई पुलिसकर्मियों को बर्खास्त कर दिया गया है। इसके अलावा मैं अपने पुलिसकर्मियों की गतिविधियों पर निगरानी रखने के लिए इंटेलिजेंस की मदद भी लेता हूं।
अगर किसी गम्भीर केस में कार्यवाही एस.पी., डी.आई.जी. या डी.जी.पी. के द्वारा ठीक से की जा रही है, आरोपी को हिरासत में ले लिया गया है तब प्राधिकरण में जाने की आवश्यकता नहीं रह जाती। पुलिस आवश्यकता पड़ने पर आरोपी को हिरासत में ले सकती है जबकि प्राधिकरण ऐसा नहीं कर सकती। दर असल प्राधिकरण की स्थापना के पीछे तर्क यह था कि पुलिस सहायता नहीं करे तब क्या विकल्प है। लेकिन यहाँ ऐसा नहीं है।

आपके विचार

महोदय,

सी.एच.आर.आई. द्वारा प्रकाशित लोक पुलिस का मैं नियमित पाठक हूँ। हिन्दी में पुलिस कर्मियों की जानकारी में अभिवृद्धि करने वाले अखबारों की नितान्त कमी है। आपका यह प्रयास इस रूप में बेहद सराहनीय है। ***लोक पुलिस*** में प्रकाशित साक्षात्कार एवं अन्य जानकारियां पुलिस में न केवल व्यावसायिक जानकारी प्रदान करती हैं अपितु उनमें मानवाधिकारों के प्रति जागरुकता पैदा करने का काम भी करती हैं। मुझे उम्मीद है कि ***लोक पुलिस*** भविष्य में भी निरन्तर विभिन्न जानकारियां प्रदान कर पुलिस कर्मियों का मार्गदर्शन करता रहेगा।

जगदीश पूनियाँ
उप अधीक्षक पुलिस
राजस्थान पुलिस अकादमी,
जयपुर

सम्पादक जी,

लोक पुलिस द्वारा जनवरी महीने से प्रारम्भ की गई प्रतिस्पर्धा काफ़ी रोचक है और मैंने अपना जवाब प्रेषित कर दिया है। मुझे इसके परिणाम अंक का बेसब्री से इंतजार है। इससे हमें अपने जानकारी को ताजा करने की आवश्यकता महसूस होती है। खासकर प्रावधानों को पढ़ना आवश्यक होता है।

ऐसे प्रतिस्पर्धाओं का समावेश करना बेहद सराहनीय है।

हेड कांस्टेबल, अररिया
सदस्य, बिहार पुलिस

पुलिस समाचार - हर कोने की हलचल

वैशाली में पहले महिला थाने की स्थापना

महिला थाना की स्थापना से किसी भी स्थान पर महिलाओं को पुलिस तक पहुंचने में सुविधा होती है। महिलाओं के लिए इसी सुविधा को उपलब्ध कराने की ओर पहला कदम वैशाली में उठाया गया है। यह थाना नाका नं.–२ के अहाते में बाज़ार समिति के पास स्थित झरुआ रोड पर बनाया गया है।

वैशाली में इस थाने की स्थापना के बाद इसके संचालन के लिए एक महिला थाना प्रभारी श्रीमती किरण पासवान को इसकी ज़िम्मेदारी दी गई है। इसके साथ ही एक सहायक उप निरीक्षक और जूनियर उप निरीक्षक की भी नियुक्ति की गई है। जिला पुलिस अधिक्षक श्री उपेन्द्र कुमार सिन्हा ने बताया कि ६ महिला कांस्टेबलों तथा एक टुकड़ी सशक्त कांस्टेबलों को भी नियुक्त किया गया है और भविष्य में कांस्टेबलों की संख्या बढ़ाई जाएगी।

इसमें कोई शक नहीं की इस प्रकार के थाने की स्थापना से महिला शिकायतकर्त्ताओं की पुलिस के पास पहुंचने में झिझक दूर होगी लेकिन, पुलिस को इसके साकारात्मक परिणाम प्राप्त करने के लिए इसके प्रचार की भी आवश्यकता है। पुलिस मुख्यालय के मीडिया सेल द्वारा ऐसे थानों की स्थापना की जानकारी राज्य स्तर के टी.वी. चैनलों तथा केबल द्वारा प्रसारित किया जाना चाहिए।

(सौजन्य : टाईम्स ऑफ इंडिया डॉट इंडिया टाईम्स डॉट कॉम ६ मार्च २०१२)

चोरों के लिए सुधार की डगर

आंध्र प्रदेश के निज़ामाबाद ज़िले में पुलिस ने पिछले तीन दशकों से चोरी और फ़िरौती में संलग्न व्यक्तियों खासकर महिलाओं, के परिवारों का उत्थान करने का निर्णय लिया है।

एक गैर सरकारी संगठन तथा महिला कांस्टेबलों की सहायता से, पुलिस अधिकारी उन गुटों का सुधार करेंगे जो पिछले तीन दशकों से चोरी और फ़िरौती में शामिल रहे हैं। प्रारम्भिक तौर पर अधिकारियों ने तीन कालोनियों से १०० परिवारों की पहचान की है।

स्टुआर्टपूरम चोरों की शैली पर एक खास समुदाय के परिवार इस अपराध में शामिल होते हैं। इनके गुटों का तरीका यह होता है कि इन की महिलाएं अजनबी लोगों को लुभाती हैं और वे लोग इन्हें सेक्स वर्कर समझ लेते हैं। फिर, ये महिलाऐं उन्हें एकांत में ले जाकर उनकी कीमती चीज़ें, पर्स आदि ले लेती हैं। अगर देने से मना किया तो वे बलात्कार के केस की धमकी देती हैं। निज़ामाबाद पुलिस के पास ऐसे कई केस दर्ज हुए भी हैं, विशिष्ट रूप से १ और ३ टाऊन पुलिस स्टेशन में।

इन परिवारों की दो पीढ़ियाँ सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन के कारण अपराधों में लिप्त रही हैं। शहर के डी.एस.पी. ने बताया कि पुलिस गैर सरकारी संगठनों और दूसरे लोगों के साथ मिलकर इन परिवारों को सुधारने के लिए 'मारपु' (बदलाव) की शुरुआत करेगी।

हालांकि, पुलिस द्वारा यह एक अच्छी पहल है समाज के एक वर्ग को आपराधिक प्रवृत्ति से बचाने की। लेकिन, यह काम शायद पुलिस का नहीं बल्कि समाज कल्याण विभाग या फिर महिला और बाल विकास विभाग को करना चाहिए और पुलिस के लिए इतना ही काफी है कि वह इसे एक सामाजिक समस्या के रूप में देखे और अपने मुख्य दायित्वों पर ध्यान दे क्योंकि इसे संभालने के लिए अलग से सरकारी खजाने पर बोझ डालना सही नहीं होगा।

(सौजन्य : डक्कन हेराल्ड ५ अप्रैल २०१२)

पुलिस सुरक्षा - वी.आई.पी. स्पेशल

जिस देश में उपलब्ध पुलिस संख्या (१३१.३६), प्रति लाख जनसंख्या पर निर्धारित (१७३.५१) पुलिस संख्या का केवल ७५ प्रतिशत के करीब है क्या वहाँ प्रत्येक वी.आई.पी. की सुरक्षा के लिए ३ पुलिसकर्मियों की तैनाती न्यायसंगत है?

गृह मंत्रालय के ब्यूरो ऑफ पुलिस रिसर्च एण्ड डेवलपमेंट (बी.पी.आर. एण्ड डी.) द्वारा पिछले महीने जारी रिपोर्ट के अनुसार भारत में पुलिस तैनाती से सम्बन्धित आँकड़ा बेहद चौकाने वाला है। इससे पता चलता है कि किस प्रकार २०१० में ५०,०५६ पुलिसकर्मियों को १६,७८८ वी.आई.पी. की सुरक्षा के लिए तैनात किया गया था। इसके विपरीत ७६१ आम लोगों के लिए केवल १ पुलिसकर्मी को तैनात किया गया था।

इस सूची में सबसे अधिक पंजाब में ५४१० पुलिसकर्मी इनके लिए लगाए गए थे जहाँ निर्धारित पुलिसकर्मियों की संख्या में से ११००० कर्मचारियों का स्थान रिक्त है। उसके बाद दिल्ली, जिसने ५१०० पुलिसकर्मियों को इस काम के लिए तैनात किया जबकि यहाँ निर्धारित पुलिस संख्या में से ११८६ स्थान रिक्त है। लेकिन, हैरानी तो आंध्र प्रदेश पर है जहाँ निर्धारित पुलिस संख्या में से सबसे अधिक ४०५६६ स्थान रिक्त है और यहाँ भी वी.आई.पी. तैनाती के लिए ३६५८ पुलिसकर्मियों को नियुक्त किया गया था।

इस आँकड़े को देखकर ऐसा लगता है कि हमारे देश में सुरक्षित रहने का अधिकार आम आदमी को तभी मिलेगा जब वी.आई.पी. सुरक्षा तैनाती से बच कर थोड़ी सी पुलिस उनके लिए भी तैनात की जाएगी।

दर असल पुलिस संख्या में कमी के मद्देनजर वी.आई.पी. सुरक्षा की आवश्यकताओं का आकलन करने के बाद ही सरकारी सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए। यदि बगैर किसी हमले की आशंका के ही किसी को सुरक्षा चाहिए तब, उन्हें इसका प्रबन्ध निजी सुरक्षा गार्डों के रूप में करना चाहिए।

एक ओर जहाँ पुलिस की कमी के कारण कैदियों को कोर्ट में प्रस्तुत कराना कठिन होता है और इस कारण कैदियों और उनके परिवारों के कई मानव अधिकारों का हनन होता है वहीं दूसरी ओर अनावश्यक और वी.आई.पी. की शौकिया सुरक्षा तैनाती सरासर पक्षपाती है। इस ओर अति शीघ्र ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है।

(सौजन्य: इकॉनिमिक्स टाईम्स डॉट इंडिया टाईम्स डॉट कॉम ६ अप्रैल २००६)

कांस्टेबल से डी.एस.पी. तक!

चेन्नई पुलिस में कांस्टेबल श्री पी. कुमार ने २००७ में ही डी.एस.पी. पद के लिए परीक्षा पास कर ली थी लेकिन, क्योंकि उनके अनुसूचित जाति के दावे के लिए संलग्न जाति प्रमाण पत्र की जाँच पूरी नहीं हो सकी थी इसलिए उन्हें अपनी नियुक्ति के लिए पाँच साल की प्रतीक्षा करनी पड़ी।

अंततः उन्हें अब तमिलनाडू राज्य पुलिस सेवा आयोग द्वारा इसके लिए आदेश दे दिया गया है। देर आए, दुरुस्त आए और अब वे अपने नए पद का कार्यभार संभालने की ओर कदम बढ़ाएंगे।

थाना स्तर के पुलिसकर्मियों के पास काम की अधिकता के रहते इस प्रकार की परीक्षा पास करना बेहद सराहनीय है और दूसरे लोगों के लिए बेहद अच्छा उदाहरण भी।

(सौजन्य: टेलिग्राफ़ इंडिया डॉट कॉम ६ अप्रैल २००६)

नवीनतम तकनीक द्वारा संदिग्ध व्यक्तियों से पूछताछ!

असम पुलिस के पास शीघ्र ही एक अत्याधुनिक पूछताछ सेंटर होगा। सुत्रों के अनुसार यह पूरे उत्तरीपूर्व क्षेत्र में पहला ऐसा सेंटर होगा जोकि राष्ट्रीय जाँच एजेंसी के प्रारूप पर आधारित होगा।

इस सेंटर की स्थापना उलुबुरी में स्थित पुलिस मुख्यालय के स्पेशल टास्क फोर्स विंग में होगी। अंतर्राष्ट्रीय तरीके से पूछताछ करने के लिए स्थापित किये जाने वाले तथा आधुनिक मशीनों और उपकरणों से लैस इस दो कमरों के सेंटर की अनुमानित कीमत २० लाख होगी।

इसमें संदिग्ध व्यक्तियों से प्रभावी तरीके से पूछताछ के लिए नवीनतम तकनीक का उपयोग किया जाएगा। इस सेंटर में आरोपी या संदिग्ध से प्रत्यक्ष रूप से केवल एक ही व्यक्ति पूछताछ करेगा जबकि दूसरे कमरे से उसके साथी तथा वरिष्ट अधिकारी इसकी पूरी प्रक्रिया को देख सकेंगे। दोनों कमरों के बीच लगे शीशे से पूछताछ कमरे से कोई बाहर का दृश्य नहीं देख सकेगा जबकि पूछताछ में पुलिस अधिकारी को अपने साथियों से अप्रत्यक्ष रूप से लैपटॉप पर मैसेज तथा ऑडियो कनेक्शन द्वारा पूरा सहयोग प्राप्त होगा। इस प्रक्रिया की ऑडियो व वीडियो रिकॉर्डिंग भी की जाएगी। पूछताछ केवल एक व्यक्ति द्वारा किये जाने से ज्यादा सही जवाब मिलने की सम्भावना होती है और विदेशों में भी पूछताछ केवल एक ही व्यक्ति द्वारा किया जाता है।

तकनीक के उचित उपयोग तथा आरोपी या संदिग्धों की मानसिक अवस्था को समझकर उसी के अनुरूप पूछताछ करने से कठिन से कठिन केसों का सुराग प्राप्त किया जा सकता है। इसके अलावा, ऑडियो व वीडियो रिकॉर्डिंग से थर्ड डिग्री तरीकों के उपयोग में कमी आएगी क्योंकि वरिष्ठ अधिकारी भी इस प्रक्रिया पर साथ–साथ नज़र रखे हुए होंगे।

(सौजन्य: टेलिग्राफ़ इंडिया डॉट कॉम ६ अप्रैल २००६)

हम, *लोक पुलिस* के इस अंक में छपे लेखों के बारे में आपके विचार जानना चाहेंगे। कृपया अपने विचार हमें अवश्य भेजें। हम उन्हें आपके नाम या अज्ञात, जैसा आप चाहेंगे, *लोक पुलिस* में प्रकाशित करेंगे। आपकी महत्वपूर्ण राय ही बदलाव लाएगी।

सी.एच.आर.आई., नई दिल्ली कार्यालय
प्रधान सम्पादक : ज़ीनत मलिक, बी-११७, दूसरा तल, सर्वोदय एन्कलेव, नई दिल्ली-११००१७, भारत
टेली : ९१ ११ ४३१८ ०२००, फैक्स : ९१ ११ २६८६४६८८, info@humanrightsinitiative.org, www.humanrightsinitiative.org